जीएस सिंघवी के समक्ष

प्रेम चंद बिच्छल-याचिकाकर्ता बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य-प्रतिवादी

सी.डब्ल्यू.पी. 1986 का क्रमांक 3139

9 अप्रैल, 2003

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 226-पंजाब सिविल सेवा (सज़ा और अपील) नियम, 1952-दुर्विनियोजन का आरोप-आपराधिक मामले में बरी होना-विभाग द्वारा नियमों के उल्लंघन के लिए दोषी के खिलाफ कार्यवाही शुरू करना, वरिष्ठों के आदेशों की अवहेलना करते हुए गैर-जिम्मेदाराना तरीके से कार्य करना-क्या विभागीय कार्यवाही रद्द की जा सकती है अपराधी के बरी होने पर - विभागीय कार्यवाही में आरोपों का कोई अलग सेट नहीं और आपराधिक मामले का विषय नहीं - विभागीय जांच की कार्यवाही को रद्द करने का कोई औचित्य नहीं - याचिका खारिज की जा सकती है।

आयोजित -

(i) आपराधिक अपराध का मुकदमा और विभागीय/घरेलू जांच एक ही स्तर पर नहीं खड़े होते हैं। विभागीय कार्यवाही में आवश्यक सबूत की डिग्री वैसी नहीं है जैसी किसी आपराधिक मामले में होती है। एक आपराधिक मामले में अभियोजन पक्ष को किसी अपराध के आरोप वाले व्यक्ति के अपराध को संदेह से परे साबित करने की आवश्यकता होती है, जब तक कि कानून के कुछ विशेष प्रावधानों द्वारा आरोपी व्यक्ति पर बेगुनाही साबित करने का बोझ नहीं डाला जाता है। लेकिन, विभागीय जांच में कुछ कानूनी रूप से स्वीकार्य सबूतों के आधार पर आरोप स्थापित किया जा सकता है जो किसी आपराधिक अपराध के आरोप को सामने लाने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकता है।

(ii) विभागीय कार्यवाही और आपराधिक मुकदमा एक साथ चलाया जा सकता है। हालाँकि, यदि विभागीय कार्यवाही उन्हीं तथ्यों पर आधारित है जिन पर आपराधिक कार्रवाई पहले ही शुरू की जा चुकी है, तो नियोक्ता के लिए अभियोजन के परिणाम की प्रतीक्षा करना उचित है।

(iii) सामान्यतः न्यायालय को केवल आपराधिक मामला लंबित होने के आधार पर विभागीय जांच की कार्यवाही पर रोक नहीं लगानी चाहिए। हालाँकि, यदि यह आश्वस्त है कि विभागीय जांच और आपराधिक आरोप समान तथ्यों पर आधारित हैं और अभियुक्त के बचाव में पूर्वाग्रह होने की संभावना है, तो मुकदमे के समापन तक विभागीय जांच की कार्यवाही पर रोक लगाई जा सकती है। ऐसे मामलों में भी, यदि आपराधिक मुकदमा अनावश्यक रूप से लंबा खिंच जाए तो विभागीय कार्यवाही पर लगी रोक को वापस लिया जा सकता है।

(iv) आपराधिक मामले में अपराधी के बरी होने के बाद भी विभागीय कार्यवाही जारी रखी जा सकती है और अनुशासनात्मक प्राधिकारी पूछताछ के दौरान प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर उचित आदेश पारित कर सकता है। ऐसा करते समय, यह सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय द्वारा दर्ज निष्कर्ष और निष्कर्ष को भी ध्यान में रख सकता है।

(v) यदि अपराधी को आपराधिक मामले में योग्यता के आधार पर बरी कर दिया जाता है, तो अनुशासनात्मक प्राधिकारी जुर्माना लगाने के लिए साक्ष्य के एक ही सेट पर भरोसा नहीं कर सकता है।

(vi) यदि विभागीय जांच और आपराधिक मुकदमे का आधार बनने वाले आरोप समान नहीं हैं, तो अनुशासनात्मक प्राधिकारी सक्षम क्षेत्राधिकार की अदालत द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष से बाध्य नहीं है। इसी प्रकार, यदि विभागीय जांच में प्रस्तुत साक्ष्य आपराधिक मुकदमे में प्रस्तुत साक्ष्य से भिन्न है तो अनुशासनात्मक प्राधिकारी मामले पर स्वतंत्र विचार कर सकता है और सजा का उचित आदेश पारित कर सकता है।

एच.एस. गिल, वरिष्ठ अधिवक्ता एच.एस. राही, याचिकाकर्ता के वकील।

प्रतिवादियों की ओर से वरिष्ठ उप महाधिवक्ता, हरियाणा,

प्रेम चंद बिछल यू. हरियाणा राज्य एवं अन्य (जी.एस. सिंघवी, जे.)

निर्णय

जी.एस. सिंघवी, जे.

(1) क्या किसी कर्मचारी के खिलाफ शुरू की गई/लंबित विभागीय जांच की कार्यवाही को केवल समान या कुछ हद तक समान आरोप पर स्थापित आपराधिक मामले में उसके बरी होने के आधार पर न्यायालय द्वारा रद्द किया जा सकता है या रद्द किया जा सकता है, यह सवाल उठता है पंजाब सिविल सेवा (दंड और अपील) नियम, 1952 के तहत याचिकाकर्ता के खिलाफ विभागीय जांच करने के लिए अधीक्षक अभियंता, लोहारू नहर सर्कल, रोहतक (प्रतिवादी नंबर 2) द्वारा जारी 21 जुलाई, 1979 के ज्ञापन को रद्द करने के लिए दायर इस याचिका में निर्धारण के लिए (संक्षेप में, नियम), जैसा कि हरियाणा राज्य पर लागू होता है।

(2) याचिकाकर्ता हरियाणा सरकार के सिंचाई विभाग में जूनियर इंजीनियर के रूप में सेवा में शामिल हुआ। वह 14 मार्च, 1970 से 30 मई, 1978 तक लोहारू फीडर डिवीजन, रोहतक में तैनात रहे। उस समय स्टोर का प्रभार उनके पास था। जून, 1978 में उनका तबादला एस.वाई.एल.

में कर दिया गया। संभाग, कुरूक्षेत्र। 30 जून, 1978 को उन्हें कार्यमुक्त कर दिया गया (ए.एन.) अपने उत्तराधिकारी श्री राज सिंह को कार्यभार सौंपने के समय, उन्होंने भौतिक रूप से सुस्त कोयले का प्रभार नहीं सौंपा था। भौतिक सत्यापन पर. यह पाया गया कि 455.56 मीट्रिक टन की कमी थी। इसके बाद, याचिकाकर्ता को आगे के सत्यापन और अपनी स्थिति स्पष्ट करने के लिए बुलाया गया। लेकिन, वह न तो सत्यापन प्रक्रिया में शामिल हुए और न ही कमी बतायी. अत: उनके विरुद्ध प्रथम सूचना रिपोर्ट संख्या 626 दिनांक 3 सितम्बर 1980 को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 409 के अन्तर्गत दर्ज करायी गयी। उन पर अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, रोहतक की अदालत में मुकदमा चलाया गया, जिन्होंने उन्हें दोषी ठहराया और 3 साल के कठोर कारावास और रुपये का जुर्माना भरने की सजा सुनाई। 10,000. अपील पर अपर सत्र न्यायाधीश (तृतीय) रोहतक ने संदेह का लाभ देते हुए उसे बरी कर दिया। यह स्पष्ट रूप से 6 जुलाई, 1985 के उनके फैसले (अनुलग्नक पी 6) के पैराग्राफ 7, 8 और 9 में विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों से पता चलता है, जिसका ऑपरेटिव भाग इस प्रकार है-

"उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और फ़ाइल में लाई गई सामग्रियों पर विचार करने के बाद और इस तथ्य के कारण भी कि अभियुक्त और पीपी. गोयल के बीच संबंध हैं जिनके उदाहरण पर यह मामला दर्ज करवाया गया था, वे तनावपूर्ण थे, मेरा मानना है कि अभियोजन पक्ष उचित संदेह से परे आरोपी के खिलाफ अपना मामला साबित करने में विफल रहा है। तदनुसार, आरोपी इस मामले में संदेह का लाभ पाने का हकदार है। नतीजतन, यह अपील सफल होती है और तदनुसार स्वीकार की जाती है और विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा आरोपी पर लगाई गई दोषसिद्धि और सजा दोनों को रद्द कर दिया जाता है और आरोपी को बरी कर दिया जाता है। यदि जुर्माना अदा किया जाता है तो उसे उचित समय में आरोपी/अपीलकर्ता को वापस कर दिया जाएगा।"

(3) इस बीच, प्रतिवादी नंबर 2 ने निम्नलिखित आरोपों पर याचिकाकर्ता के खिलाफ जांच कराने के लिए 21 जुलाई, 1970 को ज्ञापन जारी किया: -

"श्री पी.सी. बिच्छल, जे.ई. 14 अगस्त, 1979 से 30 जून, 1973 तक लोहारू फीडर सब डिवीजन नंबर II, रोहतक में स्टोर के प्रभारी थे। अपने उत्तराधिकारी श्री को स्टोर का प्रभार सौंपते हुए एसवाईएल डिवीजन, कुरूक्षेत्र में उनके स्थानांतरण पर राज सिंह, जे.ई. ने जून, 1978 के दौरान बिन कार्ड संख्या 30 के अनुसार, बेकार कोयले की मात्रा अर्थात 493.54 एम.टी. केवल कागजों में उनके उत्तराधिकारी को सौंप दी थी और सामग्री भौतिक रूप से साइट पर नहीं सौंपी गई थी। श्री पी.सी. बिच्छल ने भी दिया यह लिखते हुए कि चूँकि कोयला बिखरा हुआ पड़ा था, वह मापने योग्य स्थिति में नहीं था और यदि बाद में कोई कमी होती है तो वह इसके लिए जिम्मेदार होगा। यह लेखन भी श्री पी.सी. बिच्छल, जे.ई. ने अपने उत्तराधिकारी को दिया था। उक्त बिन कार्ड संख्या 30 के साथ श्री राज सिंह जे.ई.

2. सितंबर, 1978 में उनके उत्तराधिकारी के माध्यम से प्राप्त स्टॉक खाते की उपमंडल अधिकारी, लोहारू फीडर सब डिवीजन नंबर II, रोहतक द्वारा जांच करने पर पता चला कि 7 जनवरी, 1978 को 160 एमटी के लिए एक इंडेंट नंबर 50/121 जारी किया गया था। स्लैक कोयला वहीं स्लैक कोयले की यह मात्रा 160 मीट्रिक टन है। मां वज़ीर चंद करम चंद को 698.2 मीट्रिक टन के लिए किलो नंबर 1 पर पहले से ही 19 जनवरी, 1977 के इंडेंट नंबर 6/ए में शामिल किया गया

था। और इस खाते पर उपमंडल अधिकारी, मोहिंदरगर से प्राप्त राशि प्रेम चंद बिछल यू. हरियाणा राज्य एवं (जी.एस. सिंघवी, जे.)(160 एम.टी. स्लैक कोयले की बिक्री) का श्रेय भी विविध को दिया गया। मैसर्स की अग्रिम राशि। वज़ीर चंद करम चंद, - रसीद संख्या 032/994 दिनांक 23 फरवरी, 1978 द्वारा। इस प्रकार श्री पी.सी. बिछल, जे.ई. ने 160 एम.टी. की डुप्लीकेट प्रविष्टि की। यह दर्शाता है कि स्लैक कोयला सब डिविजनल ऑफिसर, मोहिंदरगढ़ कैनाल डिविजन नंबर वी. को इंडेंट नंबर 50/121 दिनांक 7 जनवरी, 1978 श्री पी.सी. को जारी किया गया है। बिच्छल, जे.ई., ने अपने पत्र सं. 4 दिनांक 15 नवंबर, 1978 के माध्यम से अपने द्वारा की गई गलती को स्वीकार किया और कहा कि 160 एम.टी. स्लैक कोयला उसके द्वारा स्टॉक में नहीं लिया जा सका, जिसे भट्ठे से 160 एमटी के काल्पनिक और जानबूझकर डुप्लिकेट लेनदेन से वापस लेना पड़ा। कोयले की कमी से राज्य को कोयले की इतनी मात्रा के लिए नुकसान हो रहा है।

3. इस पर उपमंडल अधिकारी, लोहारू फीडर सब डिविजन नंबर द्वितीय, रोहतक को स्टोर में पड़े स्लैक कोयले की पूरी मात्रा की माप करने को कहा गया, ताकि स्लैक कोयले की वास्तविक कमी/नुकसान का पता लगाया जा सके। उपमंडल अधिकारी, लोहारू फीडर उपमंडल नंबर 1, रोहतक ने अपने उत्तराधिकारी की उपस्थिति में भौतिक सत्यापन किया। श्री राज सिंह, जे.ई. के रूप में श्री पी.सी. श्री राज सिंह कनिष्ठ अभियंता उत्तराधिकारी द्वारा स्पष्ट सूचना दिए जाने के बावजूद बिच्छल भौतिक सत्यापन में शामिल नहीं हुए।

उपखण्ड अधिकारी की 1 दिसम्बर 1978 की रिपोर्ट से पता चला कि मात्र 197.98 एम.टी. बिन कार्ड के शेष अर्थात 493.54 एम.टी. के विरूद्ध स्लैक कोयला पड़ा हुआ था। ढीला कोयला जिसमें

160 एम.टी. शामिल नहीं था। सुस्त कोयले का उल्लेख पहले ही ऊपर किया जा चुका है। इस प्रकार स्लैक कोयले की कुल कमी 455.56 मीट्रिक टन है। विवरण के अनुसार: सुस्त कोयला दो प्रतियों में जारी किया गया। 160.00 एम.टी. भौतिक सत्यापन के समय अवशेष की कमी पाई गई अर्थात 295.56 एम.टी. 493.54-197.98 कुल 455.56 एम.टी.-

यह सुनिश्चित करने के लिए और दोगुना सुनिश्चित करने के लिए दो उपखण्ड अधिकारियों की एक समिति के माध्यम से संयुक्त रूप से सामग्री की माप कराई गई थी। संयुक्त माप का परिणाम कुल 455.56 एम.टी. की कमी का भी पता चला। 160 एम.टी. सहित ढीला कोयला। ढीला कोयला.

श। पी.सी. बिच्छल को कई बार उपमंडल अधिकारी, लोहारू फीडर सब डिविजन नंबर दो, रोहतक के कार्यालय में उपस्थित होने का अनुरोध किया गया ताकि कमी को पूरा किया जा सके और स्पष्टीकरण दिया जा सके, लेकिन वह संतुष्ट करने में विफल रहे। उन्होंने सामग्री के संयुक्त सत्यापन को संबद्ध करने के लिए भी आवेदन किया।इसलिए, वह अपने कर्तव्यों के निर्वहन में लापरवाही बरत रहा है और रुपये का नुकसान हुआ है। 455.56 एम.टी. की कमी के कारण राज्य को 94528.70 रु. ढीला कोयला।"

(4) इसके बाद, निम्नलिखित आरोपों पर नियमों के नियम 7 के तहत जांच करने के लिए प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पत्र संख्या 4587-पीएफ-शॉर्टेज दिनांक 11 मार्च 1981 के तहत एक और आरोप पत्र जारी किया गया था: -

"1. आपने श्री प्रेम चंद बिच्छल, जूनियर इंजीनियर, ने अपने उत्तराधिकारी श्री राज सिंह जूनियर इंजीनियर को भौतिक रूप से सुस्त कोयले का प्रभार नहीं सौंपा, हालांकि चार्ज सौंपने और लेने की औपचारिक प्रविष्टि दर्ज की गई है बिन कार्ड संख्या 50 पर। आपने कार्यभार स्वयं सौंपने के बजाय अपने उत्तराधिकारी को एक पर्ची दे दी। इस प्रकार आप नियमों के उल्लंघन के दोषी हैं और आपने अपने वरिष्ठों के आदेशों की अवहेलना करते हुए गैर-जिम्मेदाराना तरीके से कार्य किया है।

2. आप श्री प्रेम चंद बिच्छल। कनिष्ठ अभियंता ने 160 एम.टी. का गलत नुकसान किया। बिन कार्ड संख्या 50 में दिनांक 7 जनवरी 1978 की प्रविष्टि के अनुसार काल्पनिक और जानबूझकर डुप्लिकेट लेनदेन द्वारा सुस्त कोयला।

3. आप श्री प्रेम चंद बिच्छल, कनिष्ठ अभियंता, 295.66 मीट्रिक टन की सीमा तक सुस्त कोयले की कमी पैदा करने के लिए जिम्मेदार हैं। (493.54-197.98) बिन कार्ड संख्या 50 के अनुसार कोयले की शेष मात्रा 493.54 एम.टी. मात्र 197.98 एम.टी. भौतिक सत्यापन में पाया गया

4. आप श्री प्रेम चंद बिच्छल, कनिष्ठ अभियंता, भौतिक सत्यापन करने में सहयोग करने में विफल रहे प्रेम चंद बिच्छल बनाम. हरियाणा राज्य एवं अन्य (जी.एस. सिंघवी, जे.) वादे और वचन के बावजूद आपने सहयोग नहीं किया और इस प्रकार जानबूझकर किसी न किसी बहाने जिम्मेदारी से बचने के प्रयास से बचते रहे। इसलिए, आपने अपने जिम्मेदार स्तर के अधिकारी के रूप में बहुत ही गैरजिम्मेदाराना और अशोभनीय कार्य किया

(5) याचिकाकर्ता ने जवाब दाखिल किया और आरोपों से इनकार किया। इसके बाद, आदेश दिनांक 31 अगस्त, 1981 द्वारा, प्रतिवादी नंबर 2 ने श्री जी.डी. गुप्ता, कार्यकारी अभियंता, लोहारू नहर, मैकेनिकल डिवीजन को नियुक्त किया। जांच कराई जाएगीरोहतक. याचिकाकर्ता ने अपने खिलाफ लंबित आपराधिक मामले के समापन तक विभागीय जांच की कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए जांच अधिकारी को दिनांक 27 जनवरी, 1982 (अनुलग्नक पी 5) का आवेदन प्रस्तुत किया। जांच अधिकारी ने उनकी बात नहीं मानी. इसके बाद उन्होंने विभागीय जांच की कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए एक रिट याचिका (सी.डब्ल्यू.पी. संख्या 1880/1982) दायर की, जिसे उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया। हालाँकि, उनके द्वारा दायर विशेष अनुमति याचिका (एस.एल.पी. संख्या 12008/1983) पर सुप्रीम कोर्ट ने विचार किया और आपराधिक मामले की सुनवाई के समापन तक जांच की कार्यवाही पर रोक लगा दी गई। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित 26 अप्रैल, 1983 के आदेश का प्रासंगिक उद्धरण इस प्रकार है-

"विद्वान वकील को सुनने के बाद, हम इस बात से संतुष्ट हैं कि अपीलकर्ता के खिलाफ विभागीय कार्यवाही उसके खिलाफ आपराधिक कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान रुकी रहनी चाहिए। आपराधिक कार्यवाही समाप्त होने तक दिन-ब-दिन आगे बढ़ती रहेगी। इसके बाद, उत्तरदाता आगे बढ़ सकते हैं विभागीय कार्यवाही।"

(6) आपराधिक मामले में बरी होने के बाद, याचिकाकर्ता ने जांच की कार्यवाही को रोकने के लिए प्रतिवादी संख्या 2 को 6 दिसंबर, 1985 (अनुलग्नक पी.7) प्रस्तुत किया। बाद वाले ने अपना मामला मुख्य अभियंता/जेएलएन (पी) को भेज दिया। सिंचाई विभाग. हरियाणा इस सिफारिश के साथ कि अपीलीय अदालत द्वारा बरी किए जाने के मद्देनजर याचिकाकर्ता के खिलाफ आगे की कार्यवाही नहीं की जा सकती। हालाँकि, ऐसा प्रतीत होता है कि मुख्य अभियंता प्रतिवादी संख्या 2

की सिफारिशों से सहमत नहीं थे और यही कारण है कि याचिकाकर्ता ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इस न्यायालय के क्षेत्राधिकार का इस्तेमाल किया है।

(7) याचिकाकर्ता ने कहा है कि अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश (तृतीय), रोहतक द्वारा पारित बरी के फैसले के मद्देनजर, उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों को खारिज कर दिया गया माना जाएगा और इसलिए, प्रतिवादी नहीं हैं। सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों की अनदेखी करते हुए विभागीय जांच जारी रखने का हकदार है। उन्होंने आगे कहा है कि जिन आरोपों पर विभागीय जांच की जा रही है, वे उन तथ्यों पर आधारित हैं जो प्रथम सूचना रिपोर्ट का आधार भी बने हैं और इसलिए, अदालत द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष के तथ्य में विभागीय जांच की कार्यवाही जारी नहीं रखी जा सकती है। आरोप साबित नहीं हुए हैं.

(8) उत्तरदाताओं ने यह रुख अपनाया है कि विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश (तृतीय), रोहतक द्वारा याचिकाकर्ता को बरी करना जांच जारी रखने पर रोक नहीं लगाता है क्योंकि विभागीय कार्यवाही में जुर्माना लगाने के लिए आवश्यक सबूत के मानक हैं किसी व्यक्ति को आपराधिक अपराध का दोषी ठहराने के लिए आवश्यक से भिन्न। उन्होंने आगे कहा है कि संदेह का लाभ देकर याचिकाकर्ता को बरी करना उसे उन सभी आरोपों से मुक्त करने का आधार नहीं बनाया जा सकता है जो विभागीय जांच का विषय हैं।

(9) श्री एच.एस. याचिकाकर्ता की ओर से पेश वरिष्ठ वकील गिल ने **सुलेख चंद और सालेह चंद बनाम पुलिस आयुक्त** [1](1) और **डॉ. विजय कुमार शर्मा बनाम मुख्य सचिव**[2] **और पंजाब सरकार के सचिव**, **सतर्कता विभाग** मामले में सुप्रीम कोर्ट के फैसलों पर भरोसा किया। और अन्य (2)

---

[1] 1995(4) R.S.J. 233

[2] 1996 (1) R.S.J. 861

मोहम्मद उमर बनाम राजस्थान राज्य विद्युत बोर्ड और अन्य[3] (3) में राजस्थान उच्च न्यायालय के, और एस.के. में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के। **रामजू बनाम क्षेत्रीय प्रबंधक, एपीएसआरटीसी, नलगोंडा**[4] (4), और तर्क दिया कि सक्षम क्षेत्राधिकार की अदालत द्वारा बरी किए जाने के मद्देनजर, याचिकाकर्ता को उन्हीं आरोपों पर विभागीय जांच में दंडित नहीं किया जा सकता है और इसलिए, कार्यवाही शुरू की गई है, 21 जुलाई 1979 का पत्र रद्द किया जा सकता है और उत्तरदाताओं को इसे जारी रखने से रोका जा सकता है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि सम्मानपूर्वक बरी किए जाने और संदेह का लाभ देकर बरी किए जाने और उत्तरदाताओं के बीच कोई अंतर नहीं है। अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश (तृतीय), रोहतक द्वारा दर्ज किए गए दोषी नहीं होने के निष्कर्ष की अनदेखी करते हुए जांच की कार्यवाही जारी नहीं रख सकते

(10) श्री जसवन्त सिंह, वरिष्ठ उप महाधिवक्ता, हरियाणा ने श्री गिल के तर्कों का खंडन किया और प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश (तृतीय) द्वारा बरी कर दिया गया है। रोहतक, उसे विभागीय कार्रवाई से छूट नहीं दे सकता और सक्षम प्राधिकारी नियमित जांच के दौरान पेश किए जाने वाले साक्ष्यों पर विचार करने के बाद उचित निर्णय लेने का हकदार है। **उन्होंने नेल्सन मोटिस बनाम भारत संघ और दूसरा**[5] (5), **राजस्थान राज्य बनाम बी.के.**[6] मामले में सुप्रीम कोर्ट के फैसलों पर भरोसा किया। **मीना और अन्य** 6), और **कैप्टन एम. पॉल एंथोनी बनाम भारत गोल्ड माइंस लिमिटेड और अन्य**[7] (7), और तर्क दिया कि विभागीय जांच जारी रखी जा सकती है और अपराधी कर्मचारी को आपराधिक मामले में बरी होने के बाद भी दंडित किया जा सकता है।

---

[3] 1992(8) S.L.R. 598
[4] 2002 (1) S.L.R.
[5] J.T. 1992 (5) SC 511
[6] JT 1996 (8) SC 684
[7] JT 1999(2) SC 456

(11) मैंने संबंधित तर्कों/प्रस्तुतियों पर विचार किया है और रिकॉर्ड का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है जिसमें 21 जुलाई, 1979, 11 मार्च, 1981 के ज्ञापनों में निहित आरोप और विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश (तृतीय), रोहतक के फैसले शामिल हैं।

(12) इस सवाल पर कि क्या आपराधिक मामले में अपराधी को बरी करने के बाद अनुशासनात्मक कार्यवाही जारी रखी जा सकती है, **नेल्सन मोटिस बनाम यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य** (सुप्रा) में सुप्रीम कोर्ट द्वारा सीधे तौर पर विचार किया गया और सकारात्मक उत्तर दिया गया। उस मामले के तथ्य यह थे कि आपराधिक मामले में बरी होने के बाद अपीलकर्ता के खिलाफ कुछ इसी तरह के आरोपों पर अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई थी। जांच अधिकारी ने रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए कहा कि आरोप सिद्ध हो गए हैं। इसके बाद, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने उन्हें सेवा से हटाने का आदेश दिया। उन्होंने 1987 के ओए नंबर 401 में केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण के समक्ष इसे चुनौती दी। न्यायाधिकरण ने आवेदन की अनुमति दी और सजा के आदेश को इस आधार पर रद्द कर दिया कि जांच रिपोर्ट की प्रति उन्हें नहीं दी गई थी। इसके बाद अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने डीम्ड सस्पेंशन का आदेश पारित किया। उन्होंने 1989 के ओए नंबर 631 में उस आदेश को चुनौती दी और दलील दी कि आपराधिक मामले में उनके बरी होने के मद्देनजर विभागीय जांच जारी रखने का कोई औचित्य नहीं है। ट्रिब्यूनल ने अर्जी खारिज कर दी. सुप्रीम कोर्ट ने ट्रिब्यूनल के आदेश की पुष्टि की और निम्नानुसार कहा-

"जहां तक पहले बिंदु का संबंध है, अर्थात् क्या आपराधिक मामले में अपीलकर्ता के बरी होने के तथ्य में अनुशासनात्मक कार्यवाही जारी रखी जा सकती थी, याचिका में कोई दम नहीं है और इस

पर विस्तृत विचार की आवश्यकता नहीं है। प्रकृति और एक आपराधिक मामले का दायरा विभागीय अनुशासनात्मक कार्यवाही से बहुत अलग होता है और इसलिए बरी करने का आदेश विभागीय कार्यवाही को समाप्त नहीं कर सकता है। इसके अलावा, ट्रिब्यूनल ने बताया है कि जिन कृत्यों के कारण विभागीय अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू हुई थी। बिल्कुल वही नहीं जो आपराधिक मामले की विषय-वस्तु थी।"

(13) **राजस्थान राज्य बनाम बी.के. मीना** (सुप्रा) के अनुसार, सुप्रीम कोर्ट ने इस मुद्दे पर विचार किया कि क्या समान आरोपों पर आपराधिक मामले के लंबित रहने के दौरान विभागीय कार्यवाही पर रोक लगा दी जानी चाहिए। **दिल्ली क्लॉथ एंड जनरल मिल्स लिमिटेड बनाम कुशल भान** [8](8), **टाटा ऑयल मिल्स कंपनी लिमिटेड बनाम वर्कमेन** [9](9), **जंग बहादुर सिंह बनाम बैज नाथ तिवारी** [10](10), **और कुशेश्वर दुबे बनाम मेसर्स भारत** में पहले के फैसलों पर विचार करने के बाद **कोकिंग कोल लिमिटेड और अन्य** [11](11) ने सुप्रीम कोर्ट के अपने आधिपत्य में माना कि अदालत को केवल आपराधिक मामले की लंबितता के आधार पर विभागीय जांच की कार्यवाही पर रोक नहीं लगानी चाहिए, जब तक कि वह आश्वस्त न हो जाए कि जो आरोप हैं, वे मामले की विषय-वस्तु हैं। विभागीय जांच आपराधिक अपराध के समान होती है और आपराधिक मामले में अपराधी पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना होती है। सुप्रीम कोर्ट ने जनहित में विभागीय कार्यवाही को शीघ्र पूरा करने की आवश्यकता पर भी प्रकाश डाला।

---

[8] 1960 (3) SCR 227
[9] 1964 (7) SCR 555
[10] 1969 (1) SCR 134
[11] JT 1988 (3) SC 576

(14) डिपो मैनेजर, **आंध्र प्रदेश स्टेट रोड टैनस्पोर्ट कॉर्पोरेशन बनाम मोहम्मद यूसुफ मियां** [12](12) के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि एक साथ कार्यवाही पर कोई रोक नहीं है (जी.एस. सिंघवी, जे.)किसी आपराधिक मामले की विभागीय जांच और सुनवाई के साथ, जब तक कि आपराधिक मामले में आरोप गंभीर प्रकृति का न हो, जिसमें तथ्यों और कानून के जटिल प्रश्न शामिल हों।

(15) **एम. पॉल एंथोनी बनाम भारत गोल्ड माइंस लिमिटेड,** [13](13) में, सुप्रीम कोर्ट ने फिर से ऊपर उल्लिखित मामलों का उल्लेख किया और निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले: -

"(1) किसी आपराधिक मामले में विभागीय कार्यवाही और कार्यवाही एक साथ चल सकती है क्योंकि उनके एक साथ चलने पर कोई रोक नहीं है, हालांकि अलग-अलग।

(ii) यदि विभागीय कार्यवाही और आपराधिक मामला समान और समान तथ्यों पर आधारित है और अपराधी कर्मचारी के खिलाफ आपराधिक मामले में आरोप गंभीर प्रकृति का है जिसमें कानून और तथ्य के जटिल प्रश्न शामिल हैं, तो यह वांछनीय होगा आपराधिक मामले के समापन तक विभागीय कार्यवाही पर रोक लगाएं।

(iii) क्या किसी आपराधिक मामले में आरोप की प्रकृति गंभीर है और क्या उस मामले में तथ्य और कानून के जटिल प्रश्न शामिल हैं, यह अपराध की प्रकृति, कर्मचारी के खिलाफ शुरू किए गए मामले की प्रकृति पर निर्भर करेगा। जांच के दौरान उसके खिलाफ एकत्र किए गए साक्ष्य और सामग्री या जैसा कि आरोप पत्र में दर्शाया गया है।

---

[12] 2001 (2) Andhra Law Times 1

[13] AIR 1999 SC 1416

(iv) ऊपर (ii) और (iii) में उल्लिखित तथ्यों को विभागीय कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए अलग से नहीं माना जा सकता है, लेकिन इस तथ्य को ध्यान में रखना होगा कि विभागीय कार्यवाही में अनावश्यक देरी नहीं की जा सकती है।

(v) यदि आपराधिक मामला आगे नहीं बढ़ता है या उसके निपटान में अनावश्यक देरी हो रही है, तो विभागीय कार्यवाही। भले ही उन पर रोक लगा दी गई हो, आपराधिक मामले के लंबित होने के कारण उन्हें फिर से शुरू किया जा सकता है और आगे बढ़ाया जा सकता है ताकि उन्हें जल्द से जल्द समाप्त किया जा सके, ताकि यदि यदि कर्मचारी दोषी नहीं पाया जाता है तो उसके सम्मान की रक्षा की जा सकती है और यदि वह दोषी पाया जाता है, तो प्रशासन उसे जल्द से जल्द छुटकारा दिला सकता है।"

(16) सुलेख चंद और सालेह चंद बनाम पुलिस आयुक्त (सुप्रा) में, सुप्रीम कोर्ट ने माना कि एक बार अपीलकर्ता को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत शुरू किए गए आपराधिक मामले में योग्यता के आधार पर बरी कर दिया गया था, तो वह बहाली का हकदार था। उसकी सेवा में कोई दाग नहीं है और वह अपने कनिष्ठ की पदोन्नति की तिथि से पदोन्नति का हकदार है।

(17) वी. श्रीनिवास बनाम पुलिस अधीक्षक (14) में, आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने एम. पॉल एंथोनी बनाम भारत गोल्ड माइन्स लिमिटेड (सुप्रा) में सुप्रीम कोर्ट द्वारा की गई टिप्पणियों को गलत बताया और याचिकाकर्ता की याचिका खारिज कर दी। आपराधिक मामले में उनके बरी होने के आधार पर विभागीय जांच की कार्यवाही को रद्द करने के लिए और कहा गया:-

"यह भी अच्छी तरह से स्थापित है कि ऐसे मामले में भी जहां आपराधिक मुकदमा अपराधी कर्मचारी के पक्ष में बरी होने पर समाप्त होता है, अनुशासनात्मक प्राधिकारी की ओर से स्वयं के समान आरोपों पर अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने में कोई प्रतिबंध नहीं है। जैसा कि उल्लेख

किया गया है इससे पहले, एम. पॉल एंथोनी के मामले (सुप्रा) में, सुप्रीम कोर्ट ने स्वयं स्पष्ट रूप से माना था कि यह संभव है कि आपराधिक मुकदमे में बरी होने के बावजूद किसी व्यक्ति को कदाचार के लिए दोषी पाया जा सकता है। याचिकाकर्ता के विद्वान वकील हालाँकि, मैं आग्रह करूंगा कि जैसा कि मौजूदा मामले में आपराधिक मुकदमा और विभागीय कार्यवाही आपराधिक न्यायालय के समक्ष पेश किए गए तथ्यों और सबूतों के एक ही सेट पर आधारित है और अनुशासनात्मक प्राधिकारी बिना किसी भिन्नता के समान हैं, उपरोक्त नियम का अपवाद होगा आकर्षित होना। हालाँकि, विद्वान वकील न्यायालय के समक्ष उपरोक्त विवाद के समर्थन में कोई भी सामग्री प्रस्तुत नहीं कर सके। यहाँ तक कि आपराधिक मामले का निर्णय भी प्रस्तुत नहीं किया गया है। विद्वान अधिवक्ता का इस आशय का कथन कि इस तथ्य के बावजूद कि विभागीय आपराधिक मुकदमे के समापन से पहले कार्यवाही पूरी हो गई थी, लेकिन इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि आपराधिक मामले में याचिकाकर्ता के खिलाफ सजा का कोई भी आदेश पारित होने से पहले निर्णय दिया गया था, अनुशासनात्मक प्राधिकारी की ओर से यह अनिवार्य था कि वह इसे एम. पॉल एंथोनी (सुप्रा) मामले में शीर्ष अदालत के फैसले को ध्यान में रखते हुए भी स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

(18) मोहम्मद उमर बनाम राजस्थान राज्य विद्युत बोर्ड और अन्य (सुप्रा) में, मुझे उस मामले पर विचार करने का अवसर मिला जिसमें याचिकाकर्ता को 800 मीटर तार, पिन की चोरी करने के आरोप में विभागीय जांच में दंडित किया गया था। इस तथ्य के बावजूद कि उसी आरोप में उनके खिलाफ शुरू किए गए आपराधिक मुकदमे में उन्हें बरी कर दिया गया था, इंसुलेटर और शेकल-इंसुलेटर। फैसले के दौरान, यह देखा गया कि 1984 के आपराधिक मामले संख्या 38 में न्यायिक मजिस्ट्रेट, टोंक द्वारा बरी किए जाने के बाद, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता के खिलाफ समान आरोप पर विभागीय कार्यवाही शुरू की और उसे दंडित किया। सज़ा के आदेश

को कई आधारों पर रद्द कर दिया गया था, जिसमें यह भी शामिल था कि सक्षम क्षेत्राधिकार की अदालत द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष के सामने, विभागीय प्राधिकारी उसी आरोप पर अपराधी को दंडित करने का हकदार नहीं था। उस मामले में दिए गए कुछ प्रस्ताव नीचे दिए गए हैं:-

"आपराधिक अपराध के लिए एक मुकदमा और एक विभागीय/घरेलू जांच एक ही स्तर पर नहीं खड़े होते हैं। विभागीय कार्यवाही में आवश्यक सबूत का आरोप वैसा नहीं है जैसा कि एक आपराधिक मामले में होता है। एक आपराधिक मामले में, अभियोजन की आवश्यकता होती है किसी अपराध के आरोप वाले व्यक्ति के अपराध को संदेह से परे साबित करना, जब तक कि कानून के कुछ विशेष प्रावधानों द्वारा अपराध के आरोपी व्यक्ति पर बेगुनाही साबित करने का बोझ न डाला जाए। लेकिन एक विभागीय जांच में आरोप के आधार पर स्थापित किया जा सकता है कुछ कानूनी रूप से स्वीकार्य। सबूत जो किसी भी मामले में आपराधिक अपराध के आरोप को साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकते हैं। हालांकि, विभागीय जांच में भी, पर्याप्त सबूत पेश करने का प्राथमिक बोझ चार्जिंग प्राधिकारी पर होता है आरोप साबित करने के लिए. विभागीय जांच में किसी व्यक्ति को दंडित करने के लिए महज संदेह को आधार नहीं बनाया जा सकता।

यह कानून के सुप्रसिद्ध सिद्धांतों में से एक है कि नियोक्ता किसी अपराध के संबंध में विभागीय जांच कर सकता है, जिससे अदालत में मुकदमा भी चलाया जा सकता है। हालाँकि, यदि अनुशासनात्मक कार्यवाही उन्हीं तथ्यों के सेट पर आधारित है जिन पर आपराधिक कार्रवाई पहले ही शुरू की जा चुकी है, तो नियोक्ता के लिए सक्षम अदालत के समक्ष अभियोजन के परिणाम की प्रतीक्षा करना हमेशा उचित होता है। यदि नियोक्ता आपराधिक अभियोजन के लंबित रहने के दौरान विभागीय कार्रवाई के साथ-साथ आगे बढ़ता है, तो अदालत कर्मचारी की याचिका पर अभियोजन पर रोक लगा सकती है, जब वह संतुष्ट हो जाए कि दोनों कार्रवाई एक ही तथ्य और एक ही कारण पर आधारित हैं। ये सामान्य सिद्धांत हैं.

जब विधानमंडल ने किसी आपराधिक अपराध में किसी कर्मचारी की दोषसिद्धि के संबंध में सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय के निर्णय को अंतिम रूप देना उचित समझा है, तो न्यायालय को संबंधित प्रावधानों की व्याख्या करते समय विधानमंडल के इस इरादे को पूरा प्रभाव देना चाहिए। नियम। यदि नियोक्ता किसी कर्मचारी को दंडित करने के लिए अदालत द्वारा दर्ज अपराध के निष्कर्ष के आधार पर कार्य कर सकता है, तो इसके विपरीत को भी सही माना जाना चाहिए। इसलिए यह मानना तर्कसंगत है कि नियोक्ता अदालत द्वारा दर्ज किए गए दोषी नहीं होने के निष्कर्ष को नजरअंदाज नहीं कर सकता है और उसी आरोप के आधार पर अनुशासनात्मक कार्रवाई के साथ आगे नहीं बढ़ सकता है जो आपराधिक आरोप का हिस्सा है। अदालत द्वारा निकाले गए निष्कर्ष से जुड़ी अंतिम बात को दोषी नहीं पाए जाने की स्थिति में खारिज नहीं किया जा सकता है। जब अनुशासनात्मक प्राधिकारी किसी सक्षम अदालत द्वारा दर्ज किए गए किसी कर्मचारी की दोषसिद्धि के आधार पर सजा देने के उद्देश्य से कार्य कर सकता है, तो नियोक्ता के लिए यह खुला नहीं है कि वह ऐसी अदालत द्वारा कर्मचारी को बरी किए जाने की अनदेखी करे और निष्कर्ष दर्ज करे। जो अदालत के निष्कर्ष के विपरीत है और फिर कथित अपराध के लिए कर्मचारी को दंडित किया जाता है यह आपराधिक मामले में आरोप का एक हिस्सा है, जिसमें कर्मचारी को बरी कर दिया गया है। मेरी स्पष्ट राय है कि एक बार सक्षम न्यायालय रिकार्ड कर लेता है। आपराधिक अपराध से जुड़े किसी कार्य के संबंध में किसी कर्मचारी के खिलाफ दोषी नहीं पाए जाने पर, अनुशासनात्मक प्राधिकारी के लिए यह खुला नहीं है कि वह उसी तथ्य पर कर्मचारी के खिलाफ विभागीय कार्रवाई करे और कर्मचारी को दोषी ठहराते हुए सजा का आदेश पारित करे। यह सिद्धांत निश्चित रूप से वहां लागू नहीं होगा जहां सक्षम अदालत द्वारा दोषी नहीं पाए जाने के बाद नियोक्ता किसी कर्मचारी के खिलाफ किसी अलग आरोप में कार्रवाई करता है या जहां अधिकार

क्षेत्र की कमी जैसे तकनीकी आधार पर बरी कर दिया जाता है। मंजूरी की चाहत या सीमा की बाधा आदि।

एक और कारण है कि अदालत द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष को अंतिम माना जाना चाहिए। यह न्यायशास्त्र के बुनियादी सिद्धांतों में से एक है कि प्रशासनिक अधिकारी सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय के फैसले पर निर्णय नहीं ले सकते। कार्यकारी अधिकारी न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों पर अपीलीय प्राधिकारी के रूप में कार्य नहीं कर सकते हैं। ऐसा कोई भी प्रयास प्रशासनिक न्याय प्रणाली को पूरी तरह से नष्ट कर देगा। इसलिए, यहां एक कर्मचारी को नियमित सुनवाई के बाद सक्षम क्षेत्राधिकार की अदालत द्वारा अपराध से बरी कर दिया गया है और ऐसा बरी करना योग्यता के आधार पर है, चाहे संदेह का लाभ देकर या अन्यथा, अनुशासनात्मक प्राधिकारी के लिए किसी निष्कर्ष को रिकॉर्ड करने की अनुमति नहीं है। आपराधिक आरोप के आधार पर कर्मचारी को दोषी ठहराना और दंडित करना। कुछ निर्णयित मामलों में उन मामलों के बीच अंतर करने की मांग की गई है जहां बरी करना सम्मानजनक है और हालांकि जहां आरोपी को संदेह का लाभ दिया गया है। हालाँकि यह अंतर पहली नज़र में आकर्षक प्रतीत होता है, लेकिन वास्तव में यह पूरी तरह से भ्रामक है। यह भेद किसी तर्क पर आधारित नहीं है। कानून का यह स्थापित सिद्धांत है कि विभागीय जांच में भी अपराध का निष्कर्ष केवल कुछ कानूनी रूप से स्वीकार्य साक्ष्य के आधार पर ही दर्ज किया जा सकता है। किसी कर्मचारी को केवल कुछ संदेह के आधार पर दंडित नहीं किया जा सकता, होना ही चाहिए कर्मचारी के विरुद्ध अपराध का पता लगाने की रिकॉर्डिंग के लिए कुछ कानूनी आधार। भारत संघ बनाम एच.सी. में गोयल, एआईआर 1964 एस.सी. 364, सुरेमे कोर्ट के उनके आधिपत्य ने माना है कि किसी कर्मचारी को दंडित करने के लिए संदेह एक वैध आधार नहीं बन सकता है। इस स्थिति में यह माना जाना चाहिए कि एक बार किसी कर्मचारी को कानून की अदालत द्वारा दोषी नहीं पाया जाता है, तो नियोक्ता बाद में

यह नहीं कह सकता है कि हालांकि अपराध की खोज को दर्ज करने के लिए सबूत अदालत द्वारा अपर्याप्त पाए गए हैं, फिर भी वह दोषी नहीं है। विभागीय जांच में कदाचार के आरोप में दोषी। यह बेहद असंगत होगा यदि किसी कर्मचारी के किसी कार्य के संबंध में, जो एक आपराधिक अपराध है, विभागीय अधिकारी कर्मचारी के अपराध को सामने लाने के लिए अभियोजन एजेंसी की सहायता करने के लिए पर्याप्त सावधानी नहीं बरतते हैं, लेकिन साथ ही उस पर भरोसा करना चाहते हैं। अनुशासनात्मक कार्यवाही में कर्मचारी के खिलाफ अपराध का निष्कर्ष दर्ज करने के लिए सबूतों का एक ही सेट। ऐसी स्थिति को स्वीकार करना संभव नहीं है कि एक कर्मचारी पर सक्षम क्षेत्राधिकार वाली अदालत द्वारा आपराधिक अपराध के खिलाफ कार्रवाई की जाती है और अदालत द्वारा उसे इस आधार पर बरी कर दिया जाता है कि अभियोजन पक्ष ठोस सबूत पेश करके आरोप साबित करने में विफल रहा है, फिर भी विभागीय अधिकारी ऐसा कर सकते हैं। उसे सबूतों के एक ही सेट पर दंडित करें।"

(19) डॉ. विजय कुमार शर्मा बनाम मुख्य सचिव और पंजाब सरकार के सचिव, सतर्कता विभाग और अन्य (सुप्रा) मामले में, इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने माना कि एक बार दोषमुक्ति योग्यता के आधार पर होती है न कि तकनीकी आधार पर, तो विभागीय आरोपों के एक ही सेट पर जांच शुरू नहीं की जा सकती और वह भी सात साल की अवधि के बाद।

(20) एस.के. मैं. रामजू बनाम क्षेत्रीय प्रबंधक, एपीएसआरटीसी, नलगोंडा (सुप्रा) मामले में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने विभागीय जांच की कार्यवाही को इस आधार पर रद्द कर दिया कि एक समान आरोप पर, याचिकाकर्ता को सक्षम क्षेत्राधिकार की अदालत द्वारा बरी

कर दिया गया था। उस फैसले का पैराग्राफ 10, जिस पर श्री गिल ने भरोसा जताया है, इस प्रकार है-

"उस मामले में आपराधिक मामले और विभागीय कार्यवाही के बीच बिल्कुल भी अंतर नहीं था और इस तरह, यह माना गया कि विभागीय कार्यवाही कानूनन दूषित है। वर्तमान मामले में, हमारी राय है कि अपीलकर्ता का मामला बेहतर स्थिति में है, इस अर्थ में, अपीलकर्ता द्वारा किया गया कदाचार तथ्यात्मक मैट्रिक्स से बाहर हो जाता है, जो विषय-वस्तु भी था आपराधिक मामले का और स्वतंत्र नहीं. यह ऐसा मामला नहीं है जहां याचिकाकर्ता को उक्त दुर्घटना से संबंधित किसी भी कदाचार के लिए आरोपमुक्त कर दिया गया हो। किसी भी घटना में, जैसा कि आपराधिक न्यायालय द्वारा माना गया है कि अपीलकर्ता मौत का कारण बनने के आरोप का दोषी नहीं था और उसे संदेह के लाभ के आधार पर बरी नहीं किया गया था, हम यह समझने में विफल हैं कि उक्त निष्कर्ष के बावजूद कैसे सक्षम न्यायालय में, प्रतिवादी-निगम की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुँचाया गया है।"

(2) उपर्युक्त निर्णयों के अनुपात से जो प्रस्ताव निकाले जा सकते हैं वे हैं: -

(i) आपराधिक अपराध के लिए मुकदमा और विभागीय/घरेलू जांच एक ही स्तर पर नहीं खड़े होते हैं। विभागीय कार्यवाही में आवश्यक सबूत की डिग्री वैसी नहीं है जैसी किसी आपराधिक मामले में होती है। एक आपराधिक मामले में अभियोजन पक्ष को किसी अपराध के आरोप वाले व्यक्ति के अपराध को संदेह से परे साबित करने की आवश्यकता होती है, जब तक कि कानून के कुछ विशेष प्रावधानों द्वारा आरोपी व्यक्ति पर बेगुनाही साबित करने का बोझ नहीं डाला जाता है। लेकिन, विभागीय जांच में कुछ कानूनी रूप से स्वीकार्य सबूतों के आधार पर आरोप स्थापित किया जा

सकता है जो किसी आपराधिक अपराध के आरोप को सामने लाने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकता है।

(ii) विभागीय कार्यवाही और आपराधिक मुकदमा एक साथ चलाया जा सकता है। हालाँकि, यदि विभागीय कार्यवाही उन्हीं तथ्यों पर आधारित है जिन पर आपराधिक कार्रवाई पहले ही शुरू की जा चुकी है, तो नियोक्ता के लिए अभियोजन के परिणाम की प्रतीक्षा करना उचित है।

(iii) सामान्यतः न्यायालय को केवल इस आधार पर विभागीय जाँच की कार्यवाही पर रोक नहीं लगानी चाहिए आपराधिक मामले का लंबित होना. हालाँकि, यदि यह आश्वस्त है कि विभागीय जांच और आपराधिक आरोप समान तथ्यों पर आधारित हैं और अभियुक्त के बचाव में पूर्वाग्रह होने की संभावना है, तो मुकदमे के समापन तक विभागीय जांच की कार्यवाही पर रोक लगाई जा सकती है। ऐसे मामलों में भी, यदि आपराधिक मुकदमा अनावश्यक रूप से लंबा खिंच जाए तो विभागीय कार्यवाही पर लगी रोक को वापस लिया जा सकता है।

(iv) आपराधिक मामले में अपराधी के बरी होने के बाद भी विभागीय कार्यवाही जारी रखी जा सकती है और अनुशासनात्मक प्राधिकारी पूछताछ के दौरान प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर उचित आदेश पारित कर सकता है। ऐसा करते समय, यह सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय द्वारा दर्ज निष्कर्ष और निष्कर्ष को भी ध्यान में रख सकता है।

(v) यदि अपराधी को आपराधिक मामले में योग्यता के आधार पर बरी कर दिया जाता है, तो अनुशासनात्मक प्राधिकारी जुर्माना लगाने के लिए साक्ष्य के एक ही सेट पर भरोसा नहीं कर सकता है।

(vi) यदि विभागीय जांच और आपराधिक मुकदमे का आधार बनने वाले आरोप समान नहीं हैं, तो अनुशासनात्मक प्राधिकारी सक्षम क्षेत्राधिकार की अदालत द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष से बाध्य नहीं है। इसी प्रकार, यदि विभागीय जांच में प्रस्तुत साक्ष्य आपराधिक मुकदमे में प्रस्तुत साक्ष्य से भिन्न है, तो अनुशासनात्मक प्राधिकारी मामले पर स्वतंत्र विचार कर सकता है और सजा का उचित आदेश पारित कर सकता है।

(22) उपरोक्त चर्चा के आलोक में। मैं अब इस बात पर विचार करूंगा कि क्या याचिकाकर्ता के खिलाफ शुरू की गई विभागीय जांच उसी आरोप पर आधारित है, जो आपराधिक मुकदमे का विषय था, और इसलिए, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश (तृतीय), रोहतक द्वारा उसे बरी किए जाने के मद्देनजर आरोप-पत्र दायर किए गए हैं। रद्द किये जाने योग्य हैं। निर्णय अनुलग्नक पी.6 और ज्ञापन, दिनांक 21 जुलाई, 1979 और 11 मार्च, 1981 को संयुक्त रूप से पढ़ने से पता चलता है कि जबकि याचिकाकर्ता का अभियोजन 455.56 मीट्रिक टन सुस्त कोयले के दुरुपयोग के आरोप तक ही सीमित था, विभागीय जांच की जा रही है। उनके खिलाफ न केवल कोयले की कमी पैदा करने का आरोप लगाया गया लेकिन यह भी आरोप है कि उन्होंने अपने उत्तराधिकारी श्री राज सिंह को भौतिक रूप से सुस्त कोयले का प्रभार नहीं सौंपा था और इस तरह नियमों का उल्लंघन किया और वरिष्ठों के आदेशों की अवहेलना करते हुए गैर-जिम्मेदाराना तरीके से काम किया कि उन्होंने 160 के संबंध में काल्पनिक और जानबूझकर डुप्लिकेट लेनदेन किया था। मीट्रिक टन ढीला कोयला और वह जानबूझकर कोयले की माप के लिए किए गए भौतिक सत्यापन में शामिल होने से परहेज कर रहे थे। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ जिन चार आरोपों पर विभागीय जांच की जा रही है, उनमें से तीन अभियोजन का विषय नहीं थे। इसलिए, आरोप-पत्रों को रद्द करने या उत्तरदाताओं को विभागीय जांच जारी रखने से रोकने का कोई कानूनी या अन्यथा औचित्य नहीं हो सकता है।

(23) श्री गिल द्वारा भरोसा किये गये निर्णय याचिकाकर्ता की दलील का समर्थन नहीं करते हैं। सुलेख चंद और सलेक चंद बनाम पुलिस आयुक्त (सुप्रा) में, सुप्रीम कोर्ट ने राहत दी क्योंकि अपीलकर्ता को योग्यता के आधार पर बरी कर दिया गया था। डॉ. विजय कुमार शर्मा बनाम मुख्य सचिव और सचिव, पंजाब सरकार, सतर्कता विभाग (सुप्रा) मामले में, याचिकाकर्ता को योग्यता के आधार पर बरी कर दिया गया था और आरोपों के एक ही सेट पर 7 साल बाद विभागीय जांच शुरू करने की मांग की गई थी। मोहम्मद उमर बनाम राजस्थान राज्य विद्युत बोर्ड (सुप्रा) मामले में, अदालत ने याचिकाकर्ता को राहत दी क्योंकि सजा उस आपराधिक मामले में दर्ज निष्कर्ष के आधार पर दी गई थी जिसमें उसे बरी कर दिया गया था। इसी तरह एस.के. रामजू बनाम क्षेत्रीय प्रबंधक, एपीएसआरटीसी (सुप्रा), विभागीय जांच की कार्यवाही उसी आरोप पर आधारित थी जिस पर याचिकाकर्ता को बरी कर दिया गया था। अत: किसी भी निर्णय को याचिकाकर्ता के विरुद्ध लंबित विभागीय जांच की कार्यवाही को निरस्त करने का आधार नहीं बनाया जा सकता।

(24) किसी अन्य बिंदु पर बहस नहीं की गई।

(25) अत: रिट याचिका खारिज की जाती है। आशा है कि विभाग इस आदेश की प्रति प्राप्त होने की तारीख से 6 महीने की अवधि के भीतर यथाशीघ्र जांच को अंतिम रूप देगा।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

श्रेया बंसल

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

अंबाला, हरियाणा